रिक्की

हीडो वान हेनेक्तन

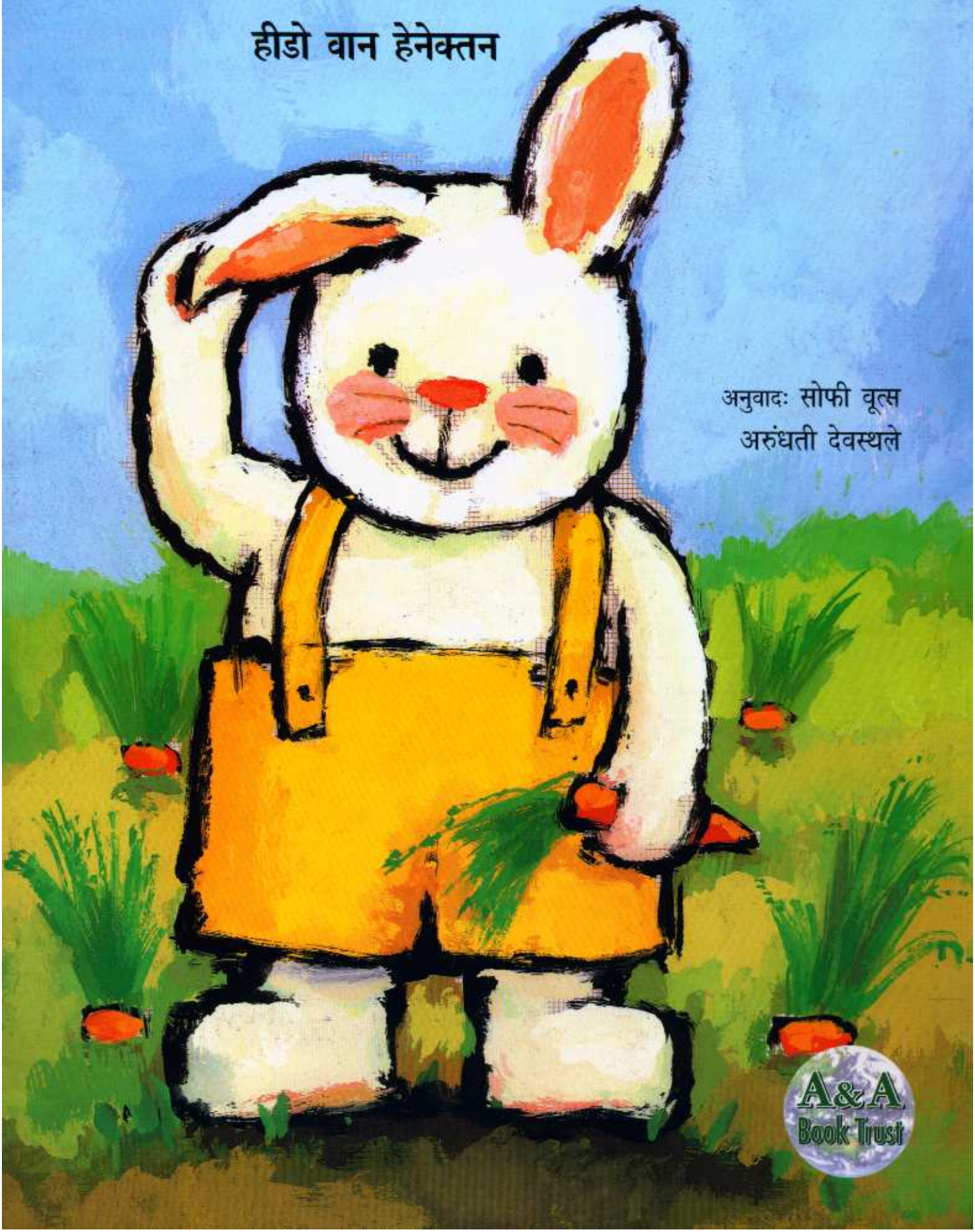

अनुवादः सोफी वूत्स
अरुंधती देवस्थले

A&A Book Trust

रिक्की

हीडो वान हेनेक्तन

अनुवादः सोफी वूत्स • अरुंधती देवस्थले

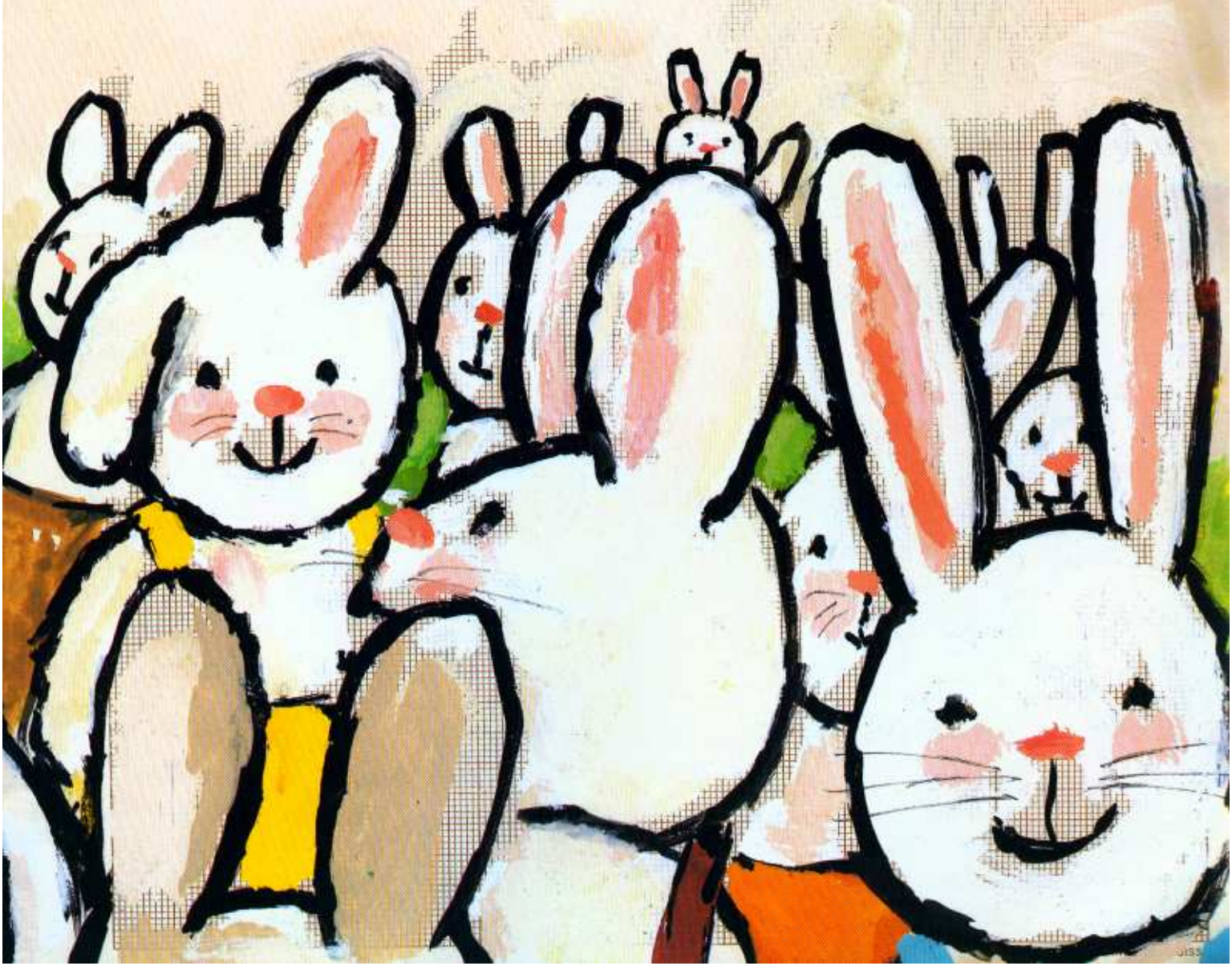

खरगोश कई तरह के होते हैं। मोटे और पतले खरगोश, लंबे और नाटे खरगोश, चालाक और बुद्धू खरगोश, सुंदर और बदसूरत खरगोश, अच्छे और शैतान खरगोश, बिल्कुल लड़कों और लड़कियों की तरह। सबके दो लंबे कान होते हैं। रिक्की के भी हैं, पर...

रिक्की के कान अलग-से हैं। सबके दोनों कान खड़े होते हैं, सीधे! पर रिक्की का दायाँ कान नीचे लटका रहता है। 'कान लटाक!' सारे खरगोश उसे इसी नाम से बुलाते हैं। 'ढीला! अपना कान तो सीधा खड़ा कर, हमारी तरह!'

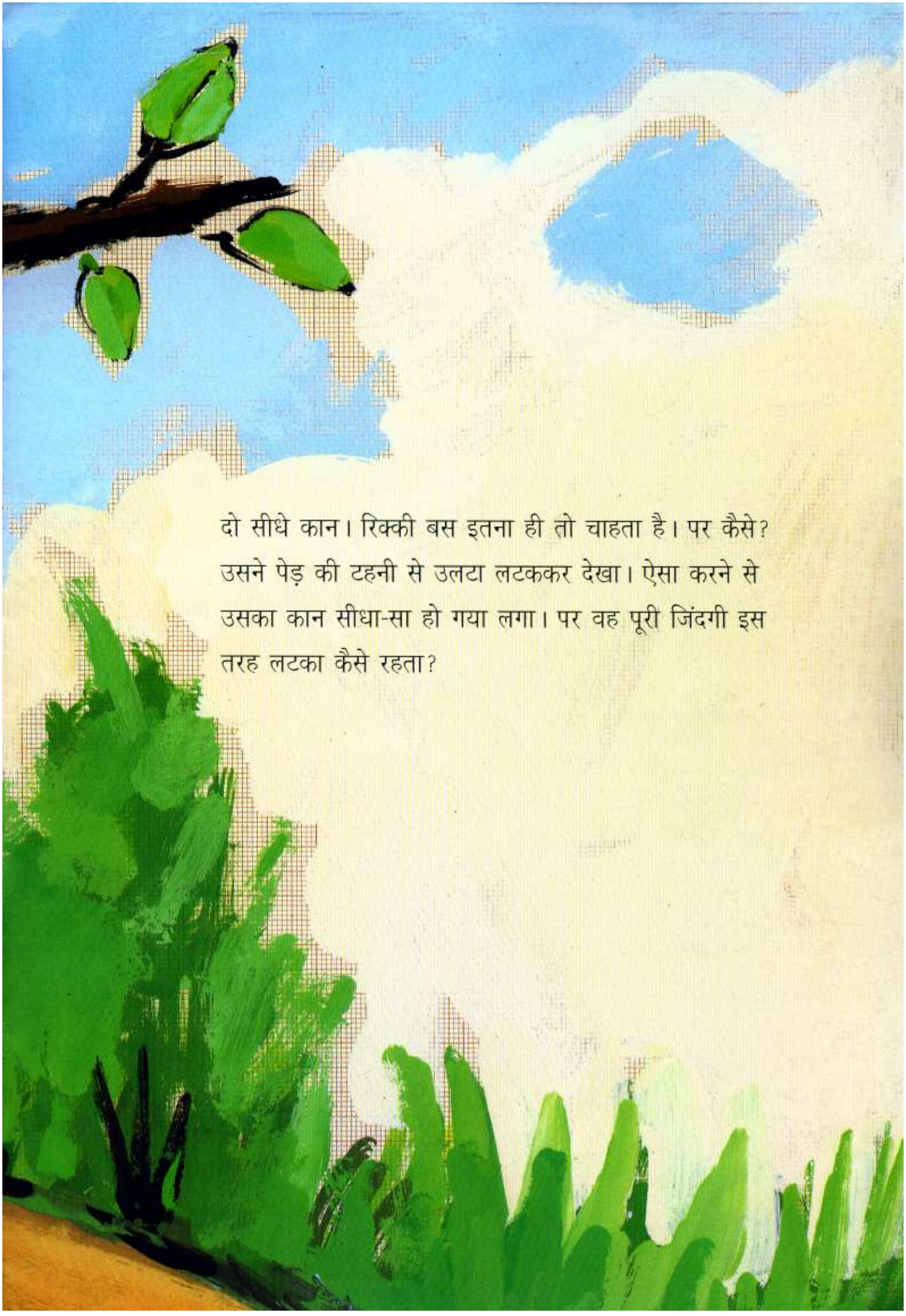

दो सीधे कान। रिक्की बस इतना ही तो चाहता है। पर कैसे? उसने पेड़ की टहनी से उलटा लटककर देखा। ऐसा करने से उसका कान सीधा-सा हो गया लगा। पर वह पूरी जिंदगी इस तरह लटका कैसे रहता?

उसने नानी की पुरानी गर्म टोपी पहनकर कान छिपाने की कोशिश की। उसका यह हुलिया देखकर सब खरगोश हँसने लगे। आज तक उन्होंने इस तरह का मजेदार कुछ नहीं देखा था। अच्छा हुआ जो रिक्की ने नहीं सुना, पर उसे बुरा तो लगा ही।

उसने कान में गाजर खोंसकर उसके सहारे
दायें कान को खड़ा करने की कोशिश की।

उसे देखकर सारे दोस्त ठहाके मार-मारकर हँस दिए।
'क्या मैं तेरा कान चबाऊँ?' किसी ने पूछा।

उसने सूखी टहनी के सहारे अपना कान बाँधकर खड़ा रखने की कोशिश की।

सब खरगोश और भी जोर-जोर से हँस पड़े।

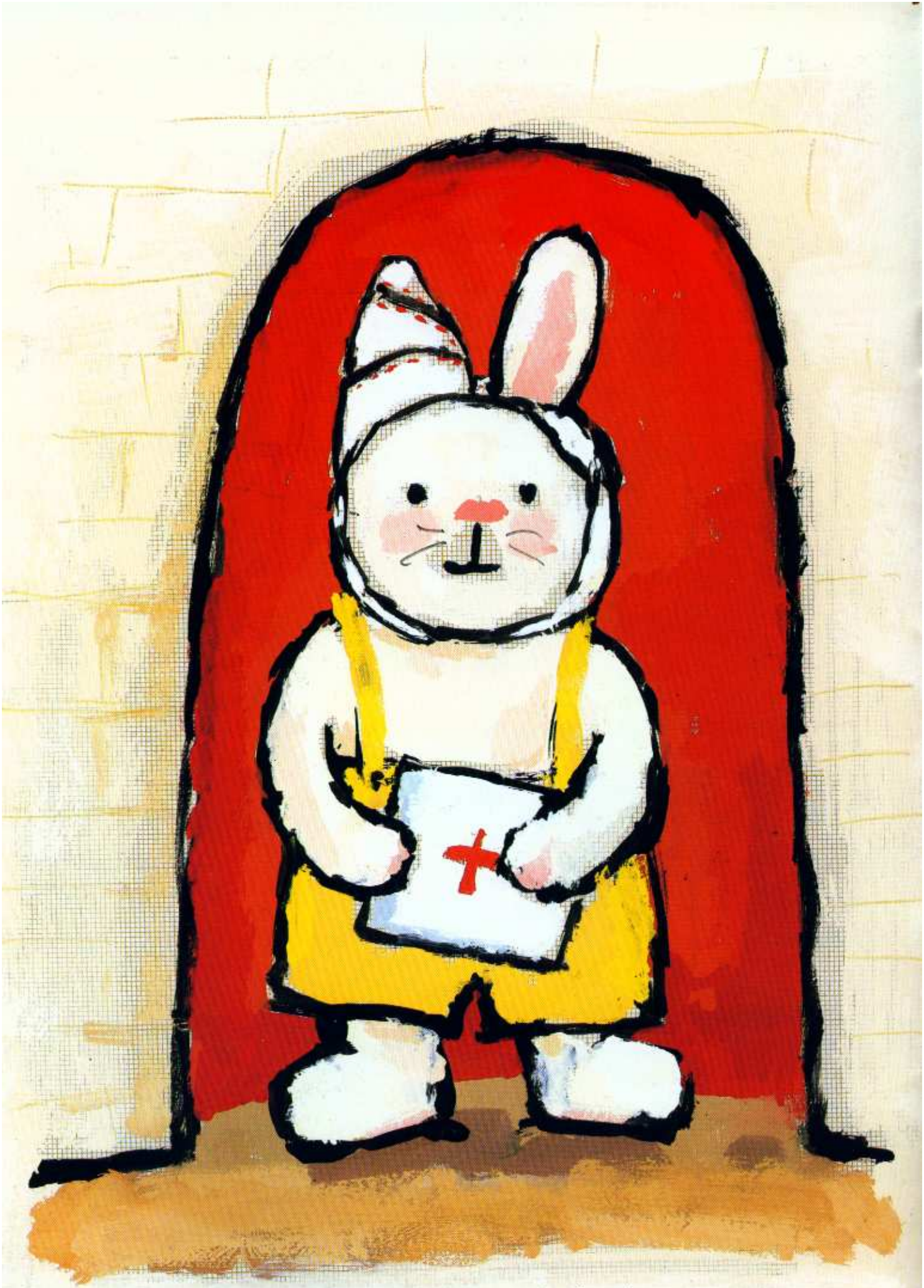

फिर उसने अपने कान पर पट्टी बाँध ली।

उसने पापा की बेंत की छड़ी पर कपड़े की चिटखनी लगाकर कान को खींचा।

उसने गुब्बारे से बाँधकर कान खड़ा किया।

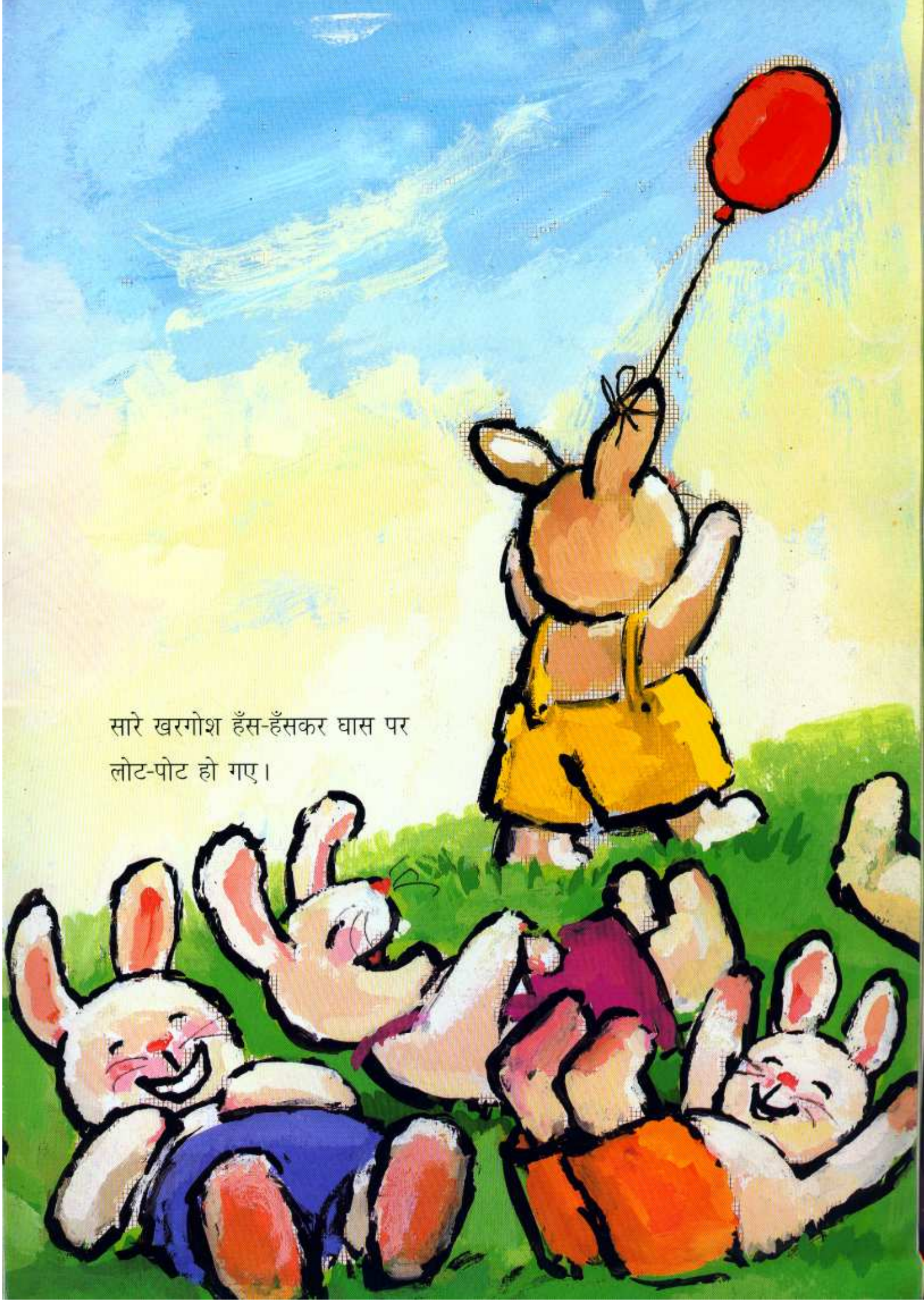

सारे खरगोश हँस-हँसकर घास पर
लोट-पोट हो गए।

बात बन ही नहीं रही थी!

'मैं उन गंदे खरगोशों से कभी नहीं मिलूँगा।' उसने पेड़ों पर चीखते हुए कहा।

'मैं इस बेवकूफ कान से छुटकारा चाहता हूँ।'

'शायद मुझे डॉक्टर के पास जाना चाहिए,' वह सुबकता हुआ बोला।

अब उसका कान और भी लटकने लगा था।

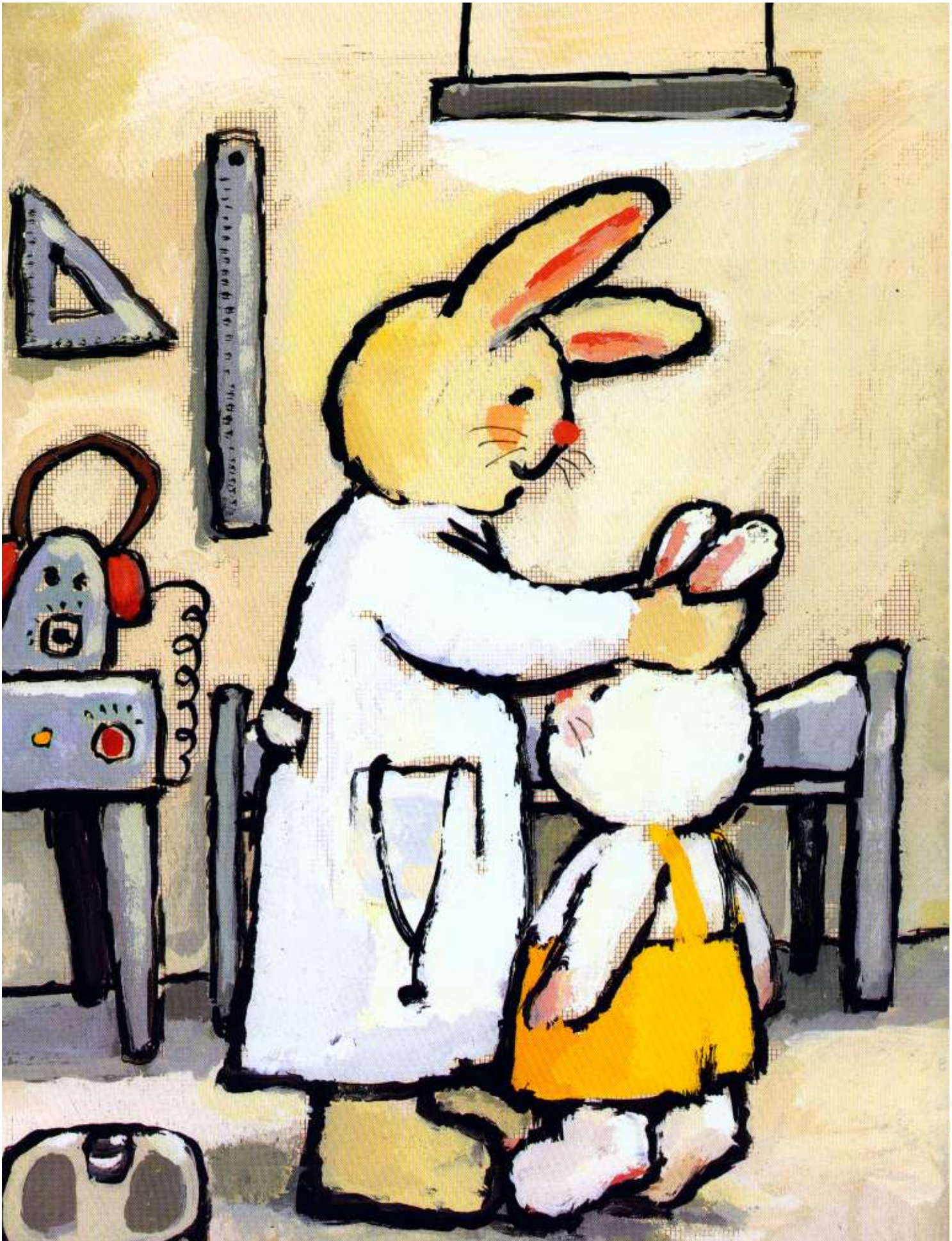

डॉक्टर ने रिक्की का कान अंदर से देखा और बाहर से भी। कान को नापा और तौला भी। फिर बीप-बीप की आवाज वाला कुछ कान में डालकर परखा।

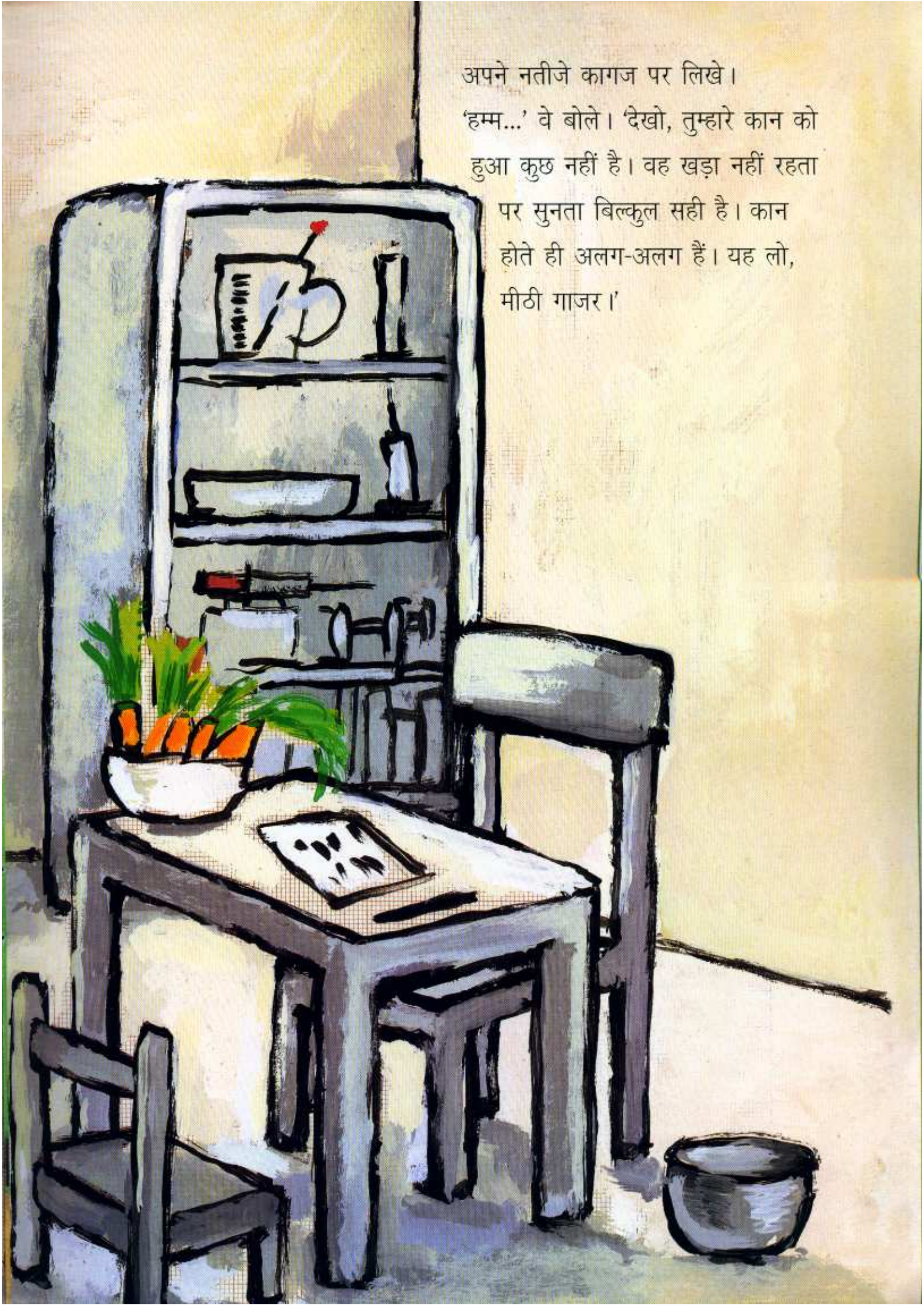

अपने नतीजे कागज पर लिखे।

'हम्म...' वे बोले। 'देखो, तुम्हारे कान को हुआ कुछ नहीं है। वह खड़ा नहीं रहता पर सुनता बिल्कुल सही है। कान होते ही अलग-अलग हैं। यह लो, मीठी गाजर।'

घर लौटते हुए डाक्टर की बताई बातों पर रिक्की ने ध्यान से सोचा। सच ही तो है — कान होते ही हैं अलग-अलग। माँ के कान प्यारे-से हैं और पापा के मजबूत। दादाजी के कान चतुर हैं और दादी के नर्म, मुलायम।

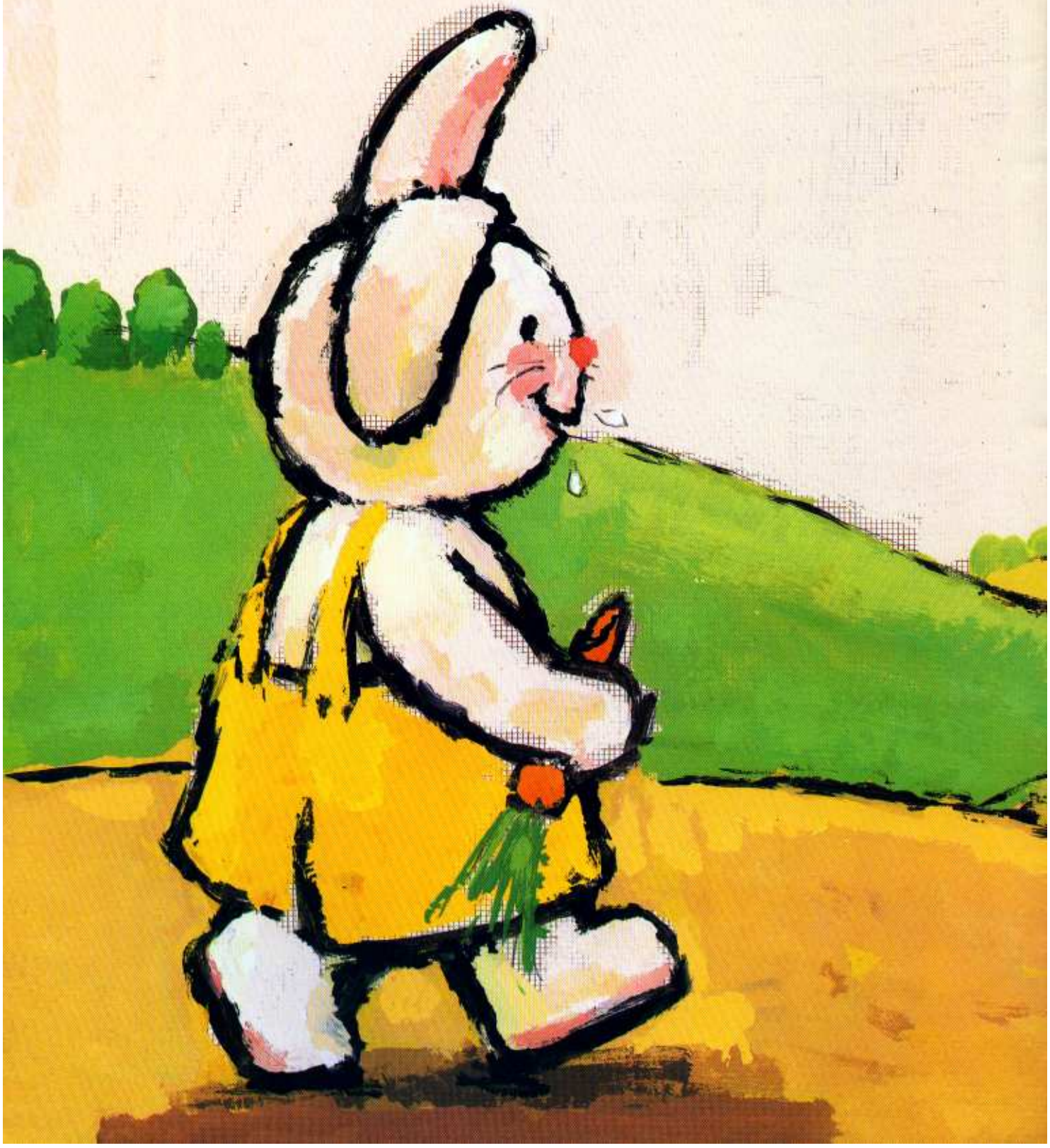

और मेरे, रिक्की सोच रहा था, दोनों कान अलग हैं, एक सीधा खड़ा और दूसरा झुका हुआ। मुझे तो अपने आप पर हँसना चाहिए। एक ऊपर, एक नीचे...

'लो आया रिक्की,' एक नन्हा खरगोश चिल्लाया।

'हैलो रिक्की,' सबसे बड़े खरगोश ने कहा। 'अच्छा नहीं लगता था, तुम्हारे बिना। अब कोई नया कारनामा दिखाओगे अपने कान से?'

'हाँ...हाँ जरुर,' रिक्की ने कहा। 'मैंने सचमुच एक बढ़िया खेल सोचा है। कल सुबह सब मुझे हरे टीले पर मिलना। हर कोई साथ में दो मीठी गाजरें और डोरी लेता आए।'

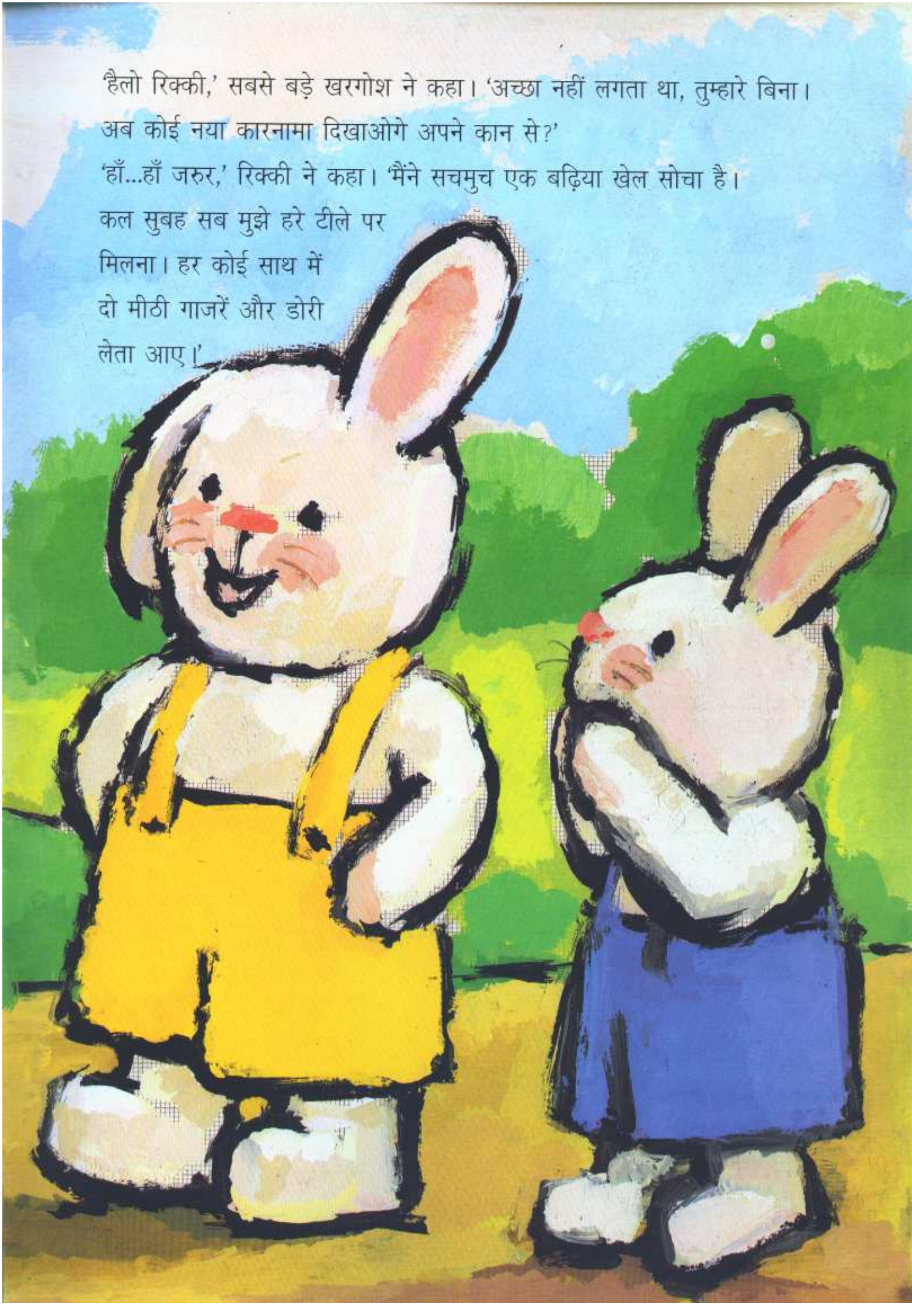

'देखो,' रिक्की बोला। 'एक गाजर सामने जमीन पर रख दो और दूसरी बाली की तरह कान से लटका दो। जैसे मैंने लटकाई है, वैसे। एक ऊपर, एक नीचे!'

सब इतनी जोर से हँसने लगे, जैसे पहले कभी नहीं हँसे थे। ऐसा मजा कभी नहीं आया था...

इस पल सारे एक-से जो लग रहे थे!

The translation and production of this book are funded by the

Flemish Literature Fund

(Vlaams Fonds voor de Letteren – www.flemishliterature.be)

Rikki by Guido van Genechten
First published in Belgium and the Netherlands in 1999
by Clavis Uitgeverij, Hasselt-Amsterdam

Text and illustrations
Copyright © 1999 Clavis Uitgeverij, Hasselt-Amsterdam

All Rights Reserved

Translated from Dutch by Sofie Wuyts & Arundhati Deosthale

First Hindi edition: February 2010

Published by
A&A Book Trust
C1-324, Palam Vihar
Gurgaon - 122 017, India
aabooktrust@gmail.com

Printed at Vimal Offset, Delhi
vimaloffset@gmail.com

ISBN: 978-93-80141-09-1